कठिनताका भय दिखाया, फिर इस लोकके एक-से-एक बढ़कर भोगोंके चित्र उसके सामने रखे और अन्तमें स्वर्गलोकमें भी उसका वैराग्य करा देनेके लिये स्वर्गके दैवी भोगोंका चित्र उपस्थित किया और कहा कि इनको यदि तुम अपने उस आत्मतत्त्वसम्बन्धी वरके समान समझते हो तो इन्हें माँग लो। परंतु नचिकेता तो दृढ़निश्चयी और सच्चा अधिकारी था। वह जानता था कि इस लोक और परलोकके बड़े-से-बड़े भोग-सुखकी आत्मज्ञानके सुखके किसी क्षुद्रतम अंशके साथ भी तुलना नहीं की जा सकती। अतएव उसने अपने निश्चयका युक्तिपूर्वक समर्थन करते हुए पूर्ण वैराग्ययुक्त वचनोंमें यमराजसे कहा—

श्वोभावा मर्त्यस्य यदन्तकैतत्
सर्वेन्द्रियाणां जरयन्ति तेजः।
अपि सर्वं जीवितमल्पमेव
तवैव वाहास्तव नृत्यगीते॥ २६॥

अन्तक=हे यमराज! (जिनका आपने वर्णन किया, वे); **श्वोभावाः**=क्षणभङ्गुर भोग (और उनसे प्राप्त होनेवाले सुख); **मर्त्यस्य**=मनुष्यके; **सर्वेन्द्रियाणाम्**=अन्तःकरणसहित सम्पूर्ण इन्द्रियोंका; **यत् तेजः**=जो तेज है; **एतत्**=उसको; **जरयन्ति**=क्षीण कर डालते हैं; **अपि सर्वम्**=इसके सिवा समस्त; **जीवितम्**=आयु (चाहे वह कितनी भी बड़ी क्यों न हो); **अल्पम् एव**=अल्प ही है (इसलिये); **तव वाहाः**=ये आपके रथ आदि वाहन और; **नृत्यगीते**=ये अप्सराओंके नाच-गान; **तव एव**=आपके ही पास रहें (मुझे नहीं चाहिये)॥ २६॥

व्याख्या—हे सबका अन्त करनेवाले यमराज! आपने जिन भोग्य वस्तुओंकी महिमाके पुल बाँधे हैं, वे सभी क्षणभङ्गुर हैं। कलतक रहेंगी या नहीं, इसमें भी संदेह है। इनके संयोगसे प्राप्त होनेवाला सुख वास्तवमें सुख ही नहीं है, वह तो दुःख ही है (गीता ५। २२)। ये भोग्य वस्तुएँ कोई लाभ तो देती ही नहीं, वरं मनुष्यकी इन्द्रियोंके तेज और धर्मको हरण कर लेती हैं। आपने जो दीर्घजीवन देना चाहा है, वह भी अनन्तकालकी तुलनामें अत्यन्त अल्प ही है। जब ब्रह्मा आदि देवताओंका जीवन भी अल्पकालका है—एक दिन उन्हें भी मरना पड़ता है, तब औरोंकी तो बात

ही क्या है। अतएव मैं यह सब नहीं चाहता। ये आपके रथ, हाथी, घोड़े, ये रमणियाँ और इनके नाच-गान आप अपने ही पास रखें॥ २६॥

न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो
लप्स्यामहे वित्तमद्राक्ष्म चेत् त्वा।
जीविष्यामो यावदीशिष्यसि त्वं
वरस्तु मे वरणीयः स एव॥ २७॥

मनुष्यः=मनुष्य; **वित्तेन**=धनसे; **तर्पणीयः न**=कभी भी तृप्त नहीं किया जा सकता है; **चेत्**=जब कि (हमने); **त्वा अद्राक्ष्म**=आपके दर्शन पा लिये हैं (तब); **वित्तम्**=धनको; **लप्स्यामहे**=(तो हम) पा ही लेंगे; (और) **त्वम् यावत्**=आप जबतक; **ईशिष्यसि**=शासन करते रहेंगे (तबतक तो); **जीविष्यामः**=हम जीते ही रहेंगे (इन सबको भी क्या माँगना है अतः); **मे वरणीयः वरः तु**=मेरे माँगनेलायक वर तो; **सः एव**=वह (आत्मज्ञान) ही है॥ २७॥

व्याख्या—आप जानते ही हैं, धनसे मनुष्य कभी तृप्त नहीं हो सकता। आगमें घी-ईंधन डालनेसे जैसे आग जोरोंसे भड़कती है, उसी प्रकार धन और भोगोंकी प्राप्तिसे भोग-कामनाका और भी विस्तार होता है। वहाँ तृप्ति कैसी। वहाँ तो दिन-रात अपूर्णता और अभावकी अग्निमें ही जलना पड़ता है। ऐसे दुःखमय धन और भोगोंको कोई भी बुद्धिमान् पुरुष नहीं माँग सकता। मुझे अपने जीवननिर्वाहके लिये जितने धनकी आवश्यकता होगी, उतना तो आपके दर्शनसे अपने-आप प्राप्त हो जायगा। रही दीर्घ जीवनकी बात, सो जबतक मृत्युके पदपर आपका शासन है, तबतक मुझे मरनेका भी भय क्यों होने लगा। अतएव किसी भी दृष्टिसे दूसरा वर माँगना उचित नहीं मालूम होता। इसलिये मेरा प्रार्थनीय तो वह आत्मतत्त्वविषयक वर ही है। मैं उसे लौटा नहीं सकता॥ २७॥

सम्बन्ध—इस प्रकार भोगोंकी तुच्छताका वर्णन करके अब नचिकेता अपने वरका महत्त्व बतलाता हुआ उसीको प्रदान करनेके लिये दृढ़तापूर्वक निवेदन करता है—